Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. XIV, Issue No. 2, January-2018, ISSN 2230-7540

कैवल्यप्राप्ति प्रक्रिया, योगविषयक आत्मतत्व एवं मोक्ष की स्थापना

Seema[1]* Dr. Prakash Pandey[2]

[1] Research Scholar, PhD (Sanskrit), Kalinga University, Raipur, Chhattisgarh

[2] Research Director, Department of Sanskrit, Kalinga University, Raipur, Chhattisgarh

***सार -** शास्त्रों और पुराणों के अनुसार जीव का जन्म और मरण के बंधन से छूट जाना ही मोक्ष है। भारतीय दर्शनों में कहा गया है कि जीव अज्ञान के कारण ही बार बार जन्म लेता और मरता है। इस जन्ममरण के बंधन से छूट जाने का ही नाम मोक्ष है। जब मनुष्य मोक्ष प्राप्त कर लेता है, तब फिर उसे इस संसार में आकर जन्म लेने की आवश्यकता नहीं होती। मोक्ष के बारे में बताने वाले मुख्य हिन्दू दर्शन, बौद्ध दर्शन, जैन दर्शन, भारतीय दर्शन है।*

---------------------------------x---------------------------------

कैवल्यप्राप्ति प्रक्रिया:

सूत्रकार के अनुसार विशुद्ध विवेकज्ञान इस कैवल्यप्राप्ति का अन्यतम साधन है।[1]

भाष्यकार के अनुसार रजो एवं तमोगुण रूपी मल से रहित हो जाने पर जब साधक के चित्त में निरन्तर सत्वगुण का उद्रेक प्रवाहित होता रहता है तो वह स्थिति चित्त का वैशारद्य कहलाती है।[2] इस वैशारद्य की स्थिति प्राप्त हो जाने पर स्वयं ही विवेकख्याति का उदय हो जाता है।[3] इस स्थिति में चित्त में विपरीत ज्ञान का लेशमात्र भी न होने से चित्त की निर्मलता के कारण ऋतम्भराप्रज्ञा उत्पन्न होती है।

यह प्रज्ञा ही पदार्थ का साक्षात्कार करवाती है। इस प्रज्ञा द्वारा पदार्थ के विशेष रूप का ज्ञान होता है।4 इस विवेकख्याति के निरन्तर अभ्यास से धर्ममेघसमाधि की स्थिति उत्पन्न होती है। जब साधक को यह ज्ञान होता है कि विवेकख्याति भी सत्वगुणात्मक है तो वह उस विवेकख्याति के प्रति भी विरक्त हो जाता है। विज्ञानभिक्षु के अनुसार असम्प्रज्ञातसमाधिकाल में पूर्वोक्त सात्विक वृत्ति निरोध के पश्चात् निरोध संस्कार भी क्षीण हो जाते हैं एवं चित्त अपने कारण सहित प्रकृति में लय हो जाता है तथा पुरूष अपने स्वरूप में प्रतिष्ठित हो जाता है। यह अवस्था ही मोक्ष अथवा कैवल्य है।

योगसम्मत कैवल्य की अन्य दार्शनिक सिद्धान्तों की तुलना:

सूत्रकार के अनुसार कैवल्य की अवस्था विशेष में पुरूष निज स्वरूप में अवस्थित हो जाता है।[5] सांख्यदर्शन के अनुसार त्रिविधदुःखों की आत्यान्तिक एवं ऐकान्तिक निवृत्ति ही परम पुरूषार्थ है।[6] न्यायदर्शन में निःश्रेयस की प्राप्ति के लिए तत्वज्ञान को अत्यावश्यक माना गया है।[7]

वैशेषिकदर्शन में भी निःश्रेयस अथवा अभ्युदय की प्राप्ति के साधन को धर्म की संज्ञा दी गई है।[8]

वेदान्तदर्शन के अनुसार जो संसार रूपी अग्नि से संतप्त होकर शान्तिप्राप्ति की इच्छा करता है वह ही इस निःश्रेयस के अध्ययन का अधिकारी है। निःश्रेयस का अर्थ है सांसारिक दुःखों से निवृत्ति प्राप्त करना। बौद्धदर्शन के चार आर्यसत्य- दुःख, दुःख के हेतु, दुःख निरोध और दुःखनिरोध के उपाय का होना उसके चार स्तम्भ हैं।[9] अतः सभी दर्शन संसार को दुःख रूप में स्वीकार करते हैं एवं दुःख को अनित्य मानते हुए इसके निरोध रूपी उपायों अथवा साधनों का अनुसंधान करते हैं। सभी दर्शनों के अनुसार दुःखों की निवृत्ति ही चरम पुरूषार्थ है। दुःख निवृत्ति के साधनों तथा उपायों के विषय में दर्शनशास्त्रों में अत्यधिक भिन्नता प्रतीत होती है। विज्ञानवादी वसुबन्धु इत्यादि आचार्य संवित पदार्थ को आत्मा मानते हैं। यह संवित् पदार्थ आलयविज्ञान और प्रवृत्तिविज्ञान रूप भेद से दो प्रकार का है।[10] विज्ञानवादियों द्वारा विज्ञान-सन्तान के उच्छेद को

निर्वाण अथवा मुक्ति कहा गया है। भोजदेव के अनुसार आलयाविज्ञानात्मक क्षणिकज्ञान को आत्मा नहीं कहा जा सकता है क्योंकि एक क्षणिकविज्ञान कर्म करे एवं द्वितीय क्षणिकविज्ञान फल का उपभोग करे यह अप्रासंगिक है।[11]

विज्ञानरूप आत्मा को सुख-दुःखादि का वास्तविक भोक्ता एवं घट पटादि विषयों का वास्तविक ज्ञाता मानने पर वह परिणामी कहा जाएगा क्योंकि जिस काल में विज्ञानरूप आत्मा में समवाय संबंध से दुःख उत्पन्न होता है उस काल में सुखानुभूति संभव नहीं है, अतः आत्मा चैतन्यरूप नहीं है।[12] क्योंकि परिणामी पदार्थ को जड़ कहा जाता है। बौद्धसम्मत् विज्ञानरूप आत्मा का उच्छेदरूपी निर्वाण अथवा मोक्ष भी पुरूषार्थप्रद न होने के कारण अयुक्त है क्योंकि किसी के निजस्वरूप का नाश उसका पुरूषार्थ नहीं हो सकता। जैनदर्शन के अनुसार यह आत्मा मध्यम परिणाम वाला है। मच्छर, हस्ती इत्यादि के शरीरावच्छेद द्वारा भिन्न-भिन्न परिणाम धारण करने से आत्मा भी परिणामी कहलाता है। इस प्रकार आत्मा का आलोकाकाश गमन ही मोक्ष कहलाता है।[13]

भोजदेव के अनुसार उक्त मत अनुचित है क्योंकि आत्मा यदि परिणामी है तो उसकी चैतन्यरूपता सिद्ध नहीं हो सकती क्योंकि परिणामित्व तथा अचेतनत्व अविनवभाव संबंध है। आत्मा को जड़ मानने पर इसकी आत्मत्वेन सिद्धि नहीं हो सकती। इस प्रकार जैनसम्मत आत्मस्वरूप युक्तियुक्त न होने के कारण मोक्ष की अयुक्तता स्पष्ट होती है।[14]

आत्मा चिदानन्दस्वरूप है ऐसी वेदान्तदर्शन की मान्यता है। मोक्ष की अवस्था में यह आत्मा चिदानन्द रूप में प्रतिष्ठित हो जाता है।[15] भोजदेव वेदान्त उक्त इस मत को अस त मानते हैं। भोजदेव के मतानुसार मोक्षावस्था में आत्मा स्वकीय चैतन्य रूप से ही रहता है, आनन्द रूप से नहीं। आनन्द पुरूष का स्वरूप न होकर औपाधिक धर्म विशेष है। अपन कारण यह है कि आत्मा को सुख स्वरूप नही कहा जा सकता क्योंकि सुख सर्वदा ज्ञेयरूप है तथा ज्ञेयता ज्ञान के बिना असम्भव है। इस प्रकार यदि मोक्षावस्था में ज्ञान एवं ज्ञेय रूप दो पदार्थों को माना जाए तो वेदान्यिों का अद्वैतवाद सिद्ध नहीं हो सकेगा।[16]

भोजदेव पुनः कहते हैं कि अद्वैववेदान्तवादि जीवात्मा एवं परमात्मा रूप से आत्मा के दो भेद स्वीकार करते हैं।[17]

वेदान्तदर्शन के अनुसार जीवात्मा सुख-दुःख का भोक्ता है। यदि परमात्मा को भी जीवात्मा की श्रेणी में रखा जाए तो परमात्मा को भी जीवात्मा के समान अज्ञानी तथा परिणामी मानना पडेगा। अतः आत्मा को साक्षात् रूप से सुख-दुःख का भोक्त नही कहा जा सकता। भोजदेव के अनुसार अविद्या को जीवात्मा का स्वरूप मानना अनुचित है क्योंकि यदि ऐसा माना जाए तो अविद्या, दुःखादि से निवृत्ति कराने वाले शास्त्र का उपदेश व्यर्थ होगा।[18] आत्मा के नित्य होने के कारण अविद्यात्तस्वरूप सर्वदा बना रहेगा।

इस प्रकार भोजदेव वेदान्तोक्त आत्मा की मोक्षावस्था में होने वाली चिदानन्दमयता को सम्यक् नहीं मानते। न्यायदर्शन के अनुसार ज्ञान अथवा बुद्धि आत्मा में समवाय संबंध से रहता है अतः आत्मा जड़ है। आत्ममन संयोग से आत्मा में चैतन्य की उत्पत्ति होती है।[19] मिथ्याज्ञान की निवृत्ति होने पर अविद्यामूलक ज्ञानादि विशेष गुणों की भी निवृत्ति हो जाती है। इसके परिणामस्वरूप आत्मा अपने वास्तविक जड़ रूप में प्रतिष्ठित होता है।[20]

भोजदेव के अनुसार न्यायदर्शन का उक्त मत उचित नहीं है क्योंकि आकाशादि द्रव्यों से आत्मतत्व को अलग करने के लिए आत्मा को चैतन्यस्वरूप मानना पडेगा।[21] यहां यह मानना होगा कि मोक्षावस्था में जीवात्मा, सांसारिक अवस्था से अविद्यानिमित्तक जो सुख-दुःखादि का अनुभव करता है उससे मुक्त हो जाता है तथा अपने शाश्वतिक चिद्रूप में सर्वदा के लिए प्रतिष्ठित हो जाता है।[22] मीमांसादर्शन के अनुसार आत्मा के जड़ एवं चेतन अथवा कत्र्ता एवं कर्म दो रूप हैं। ''घटमहं जानामि'' यहां आत्मा 'अहम्' प्रत्यय के द्वारा गृहीत होता है। इस 'अहम्' प्रतीति के स्थल में आत्मा में ज्ञानाश्रयत्व के कारण कर्तृत्व एवं ज्ञानविषयत्व के कारण कर्मत्व रहता है।[23]

भोजदेव के अनुसार एक ही समय एक ही पदार्थ में प्रमातृत्वरूप कर्तृत्व तथा प्रमेयत्वरूप कर्मत्व धर्म नहीं रह सकते। ज्ञाता एवं ज्ञेय तथा कर्तृत्व एवं कर्मत्व धर्मों का परस्पर विरोध है। जिस प्रकार परस्पर विरोधी घट एवं उसका अभाव तुल्यकाल में भूमि पर सम्भव नहीं है उसी प्रकार 'अहम्' प्रत्यय के विषयभूत आत्मा में कर्तृत्व तथा कर्मत्वरूप विरूद्ध धर्मों का होना इस प्रकार उचित नहीं है।[24] शैवागम सम्प्रदाय के अनुसार आत्मा विमर्शरूप होने के कारण चेतन है। यह विमर्शरूप आत्मा चिद्रूप होने के कारण समस्त जड़ पदार्थों से भिन्न है।[25] भोजदेव के अनुसार 'यह इस प्रकार का ही है' ऐसा विचार विशेष ही विमर्श कहलाता है।[26]

इस प्रकार का विचार अस्मितारूप विपर्यय ज्ञान के द्वारा उत्पन्न होता है।27 अन्तःकरण में उत्पन्न होने वाले विमर्श का स्वरूप इस प्रकार है- 'अहमेवं भूतः' अर्थात् मैं ऐसा हूं। इस प्रकार की प्रतीति में आत्मा को 'अहम्' से अभिन्न समझा जाता है। यह ही मिथ्याज्ञान कहलाता है क्योंकि निश्चय बुद्धि का धर्म है। नित्य ज्ञानस्वरूप पुरूष सदा एकरस है। पुरूष का

www.ignited.in

वृत्यात्मक परिणाम नहीं होता इसी कारण पुरूष का अहंकार में अन्तर्भाव संभव नहीं है। इस प्रकार विमर्श पुरूष न होकर बुद्धि रूप है।[28]

विज्ञानभिक्षु अन्य दर्शनों एवं योगदर्शन में समानता प्रकट करते हुए कहते हैं कि सांख्यदर्शन के अनुसार त्रिविधदुःखों की अत्यान्तिक निवृत्ति ही कैवल्य है एवं योग दर्शन में भी दुःखों को हेय संज्ञा दी गई है। इस प्रकार दोनों में समानता प्रतीत होती है।[29]

नैयायिकों ने भी दुःखनिवृत्ति को ही मोक्ष संज्ञा दी है अतः उनका भी योगदर्शन से अविरोध स्पष्ट है।[30] वैशेषिकों का समस्त विशेष गुणों के उच्छेद को मोक्ष मानना भी योगदर्शन के अनुरूप ही है क्योंकि योगदर्शन में विशेष गुणों को'उपाधि' संज्ञा दी गई है।[31] वेदान्ती परमात्मा में जीवात्मा के लय को मोक्ष संज्ञा देते हैं। विज्ञानभिक्षु के अनुसार वेदान्तोक्त सिद्धान्त योगदर्शन के समान है। जिस प्रकार सागर में नदियों का लय हो जाता है उसी प्रकार उपाधि के लीन हो जाने से ब्रहम में जीव का लय हो जाता है।[32]

योगविषयक आत्मतत्व एवं मोक्ष की स्थापना:

सूत्रकार के अनुसार संसार रूपी क्लेश से विमुक्ति का मार्ग ही योग कहलाता है। इस योगरूपी मार्ग से प्राप्त होने वाली विमुक्ति ही कैवल्य कहलाती है। आत्मा चैतन्य - रूप होने के कारण जड़ पदार्थों से भिन्न है। योगदर्शन के अनुसार आत्मा नित्य, कूटस्थ त्रिगुणातीत, ज्ञानस्वरूप, व्यापक, निष्क्रिय, अपरिणामी, अधिष्ठाता एवं चिन्मात्रतत्व है। इस प्रकार दृश्यमान जगत् पुरूषार्थ रूप है।[33] सम्पूर्ण दृश्य जगत् निज प्रयोग की सिद्धि के लिए प्रवृत्त न होकर इस चिन्मात्र पुरूष के भोग एवं मोक्ष के सम्पादन के लिए ही है। निज सुख-दुःखादि का उपभोग भी प्रकृति के प्रयोजनार्थ ही है। भोग के पश्चात् प्रकृति पुरुष के लिए मोक्ष का सम्पादन करती है। बुद्धि प्रतिबिम्ब विधि से पुरूष के लिए भोग का सम्पादन करती है। सुख-दुःखादि विषयाकार बुद्धि में प्रतिबिम्बित पुरूष भ्रांतिवश दुःखी होता है तथा स्वयं को कर्त्ता मानकार सुख प्राप्ति एवं दुःख-निवृत्ति के प्रयोजनार्थ शुभाशुभ कर्मों में प्रवृत्त होता है जिसके परिणामस्वरूप जाति, आयु तथा भोग रूप विपाक उत्पन्न होते हैं।

उपाधिभूत चित्त के साथ सम्पर्क होने के कारण पुरूष केवलता अथवा शुद्धता का न हो पाना ही पुरूषबन्ध कहलाता है। पुरुष की यह उपाघि रूप की शाश्वतिक निवृत्ति ही कैवल्य कहलाती है। कैवल्य की दशा में त्रिगुण दुःखों का भी शाश्वतिक नाश हो जाता है। भगवद्गीता के अनुसार तीनों गुणों से अतीत पुरूष साक्षी के समान स्थित होने पर इन गुणों के कारण विचलित नहीं होता। पुरूष को इस तथ्य का ज्ञान हो जाता है कि गुण ही गुणों में व्यवहार करते हैं। अतः वह चिन्मात्र स्वरूप में स्थित रहता है। इस प्रकार आत्म-भाव में स्थित रहना, सुख-दुःख में समभाव रहना तथा समस्त कार्यों का परित्याग करना ही गुणातीत अवस्था कहलाती है।[34] गीता में वर्णित इस गुणातीत अवस्था को ही योगदर्शन में असम्प्रज्ञातसमाधि की संज्ञा दी गई है।

योगदर्शन के अनुसार असम्प्रज्ञातसमाधि एवं कैवल्य की स्थिति में अत्यधिक समानता है। सूत्रकार के अनुसार चित्तवृत्तिनिरोधात्मक असम्प्रज्ञातसमाधि की अवस्था में द्रष्टा पुरूष निज चिन्मात्र रूप में प्रतिष्ठित रहता है।[35] एवं मोक्ष अथवा कैवल्य की अवस्था में भी चित्तशक्ति निजरूप में प्रतिष्ठित हो जाती है।[36] अतः मोक्ष एवं असम्प्रज्ञातसमाधि की अवस्था लगभग एक सी है। कैवल्य की प्राप्ति का सरल उपाय ईश्वरप्रणिधान को कहा गया है। भाष्यकार के अनुसार ईश्वरप्रणिधान अथवा भक्ति विशेष के द्वारा प्रसन्न होने पर ईश्वर की कृपा विशेष के द्वारा साधक कैवल्य अथवा असम्प्रज्ञातसमाधि के फल रूप मोक्ष को प्राप्त करता है। योगदर्शन के अनुसार चित्त ही परमार्थतः बन्ध एवं मोक्ष से युक्त है। अतः पुरूष में बन्ध एवं मोक्ष का व्यवहार औपचारिक है। व्यास दृष्टांत प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि जिस प्रकार युद्ध में होने वाली जय अथवा पराजय सेना की होने पर भी राजा की जय अथवा पराजय मानी जाती है ठीक उसी प्रकार विवेकाग्रह के कारण निज आश्रय प्रतिबिम्बत्व संबंध द्वारा पुरूष का भोग एवं मोक्ष समझा जाता है। साधक का चित्त अज्ञान रूपी मार्ग से बहता हुआ कैवल्य में विश्रान्ति को प्राप्त करने वाला हो जाता है ऐसा भाष्यकार द्वारा वर्णन किया गया है।37

विवेकज्ञान द्वारा तृप्त होने पर साधक का चित्त केवलता की स्थिति की ओर बह निकलता है। समाधि की अवस्था से पूर्व निरन्तर अभ्यास के द्वारा चित्त निरोध करने पर ही कैवल्य रूपी मार्ग खुलता है जिसके परिणामस्वरूप चित्त पुण्यमयी विवेक धारा में बिना प्रयत्न के बहता जाता है।38 विवेकज्ञान के उदय होने पर चित्त पूर्ण रूप से अन्तर्मुखी हो जाता है तथा बाह्य जगत के कार्यों अथवा विषयों में चित्त लगाना असम्भव सा हो जाता है। जिस प्रकार बाह्य विषयों में लगे व्यक्ति को चित्त समाधिस्थ करने में कठिनता अनुभव होती है ठीक उसी प्रकार विवेकख्यातिप्राप्त साधक को चित्त को बहिर्मुखी करने में कठिनता होती है।

संदर्भ सूची:

1. यो. सू., 2/26
2. व्या. भा.
3. वही
4. वही
5. यो. सू. 1/3
6. (क) दुःखत्रयाभिघाताज्जिज्ञासा तदपघापके हेतौ। सां. का., 1/1 (ख) त्रिविध दुःखात्यन्तनिवृतिरत्यन्तपुरूषार्थः। सां. द., 1/1
7. तत्वज्ञानान्निः श्रेयसाधिगमः। न्या. द., 1/1/1
8. तयोभयुदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः। वै. द. 1/1/1
9. धम्मपद,
10. तत्स्यादालय-विज्ञानं यद्भवेदहमास्पदम्। तत्स्यात् प्रवृत्तिविज्ञानं यन्नीलादिकमुल्लिखेत। स. द. सं.
11. कृतहानाकृताभ्यागमप्रसंगश्च। रा. मा. वृ.
12. कृतहानाकृताभ्यागमप्रसंगश्च। रा. मा. वृ.
13. गत्वा गत्वा निवर्तन्ते चन्द्रसूर्यादयो ग्रहाः। अद्यापि न निवर्तन्ते त्व लोकाकाशमागताः।। सं. द. सं.
14. रा. मा. वृ.
15. ये तु वेदान्तवादिनश्चिदानन्दमयत्वभात्मनो मोक्षं मन्यन्ते। वही
16. आनन्दस्य..... युपगमाद् अद्वैतहानिः। रा. मा. वृ.
17. अद्वैतवादिभिः कर्मात्म-परमात्मभेदेन आत्मा द्विविधः स्वीकृतः। वही
18. नापि अविद्यास्वभावत्वात् कर्मात्मा, ततश्च सकलशास्त्र वैयश्र्यप्रसंगः। भो. वृ.
19. रा. मा. वृ.
20. वही
21. वही
22. रा. मा. वृ.
23. वही
24. वही
25. वही
26. इदमित्थमेव रूपमिति यो विचारः सः विमर्श इत्युच्यते। वही
27. वही
28. रा. मा. वृ.
29. इति सांख्य सूत्रं चानेन सूत्रेण सहाविरुद्धम्। यो. सा. सं.
30. नैयायिकास्त्वात्यन्तिकी दुःखनिवृत्तिर्मोक्ष इतीच्छन्ति तत्वस्मन्मतमेव। वही
31. वैशेषिकास्तु अशेषविशेषगुणोच्छेदो मोक्षः इत्याहुः। वही
32. वही
33. यो. सू. 2/21
34. गीता 14/23-25
35. तदाद्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्। यो. सू. 1/3
36. पुरुषार्थशून्यानां गुणानां प्रतिप्रसवः कैवल्यं स्वरूपप्रतिष्ठा वा चित्तशक्तिरिति। वही, 4/34
37. तदानीं यदस्य चित्तं विषयप्राम्भारमज्ञाननिम्नमासीत, तदस्यान्यथा भवति कैवल्यप्राम्भारं विवेकज्ञाननिम्नमिति। व्या. भा.
38. तत्र वैराग्येण विषयस्रोतः खिलीक्रियते, विवेकदर्शनाः भ्यासेन विवेकस्रोत उद्घाट्यत इत्युभयाधीनश्चित्तवृत्तिनिरोधः। वही

Corresponding Author

Seema*

Research Scholar, PhD (Sanskrit), Kalinga University, Raipur, Chhattisgarh